माननीय न्यायमूर्ति स्वतंतर कुमार और अमर दत्त के समक्ष

ए. डी. गौर, याचिकाकर्ता

बनाम

चंडीगढ़ में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय अपने रजिस्ट्रार के माध्यम से,-प्रतिवादी

C.W.P. NO. 10327 OF 2003 8th July, 2004

भारत का संविधान, 1950-अनुच्छेद 226-उच्च न्यायालय द्वारा बनाए गए दिशानिर्देशों के आधार पर एक न्यायिक अधिकारी के ए.सी.आर. की डाउन ग्रेडिंग, जिसमें प्रावधान है कि यदि निरीक्षण न्यायाधीश ने पिछले वर्ष की पूर्ण न्यायालय ग्रेडिंग की तुलना में एसीआर में किसी अधिकारी को उच्च ग्रेडिंग दी है, तो पूर्ण न्यायालय की ग्रेडिंग प्रश्नगत वर्ष के लिए वही रहेगी जो उसे पिछले वर्ष में दी गई थी - पूर्ण न्यायालय के समक्ष ऐसी कोई सामग्री नहीं है जो याचिकाकर्ता के एसीआर को डाउनग्रेड करने के लिए एक वैध कारण के रूप में गठित हो सके - केवल दिशानिर्देश ही डाउनग्रेड का आधार हैं याचिकाकर्ता की एसीआर की ग्रेडिंग करना - ऐसे दिशानिर्देश न तो उच्च न्यायालय द्वारा अधिसूचित किए गए और न ही न्यायिक सेवा के सदस्यों के ध्यान में लाए गए - प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत प्रशासनिक अधिकारियों पर यह सुनिश्चित करने का दायित्व डालते हैं कि सेवा की स्थिति को प्रभावित करने वाले भौतिक मामले सामने आने चाहिए। प्रभावित व्यक्तियों के ध्यान में लाया जाए-डी.बी. का निर्णय। ईश्वर चंदर जैन के मामले में अंतिम निर्णय प्राप्त हुआ जिसमें यह माना गया कि किसी भी सामग्री के अभाव में पूर्ण न्यायालय द्वारा टिप्पणियों को कम नहीं किया जा सकता है - यह निर्णय उच्च न्यायालय के लिए बाध्यकारी होगा - याचिका की अनुमति दी गई।

यह अभिनिर्धारित किया गया कि सेवा न्यायशास्त्र ने हाल के समय में एक नया आयाम प्राप्त किया है। न्यायालयों के सुसंगत लेकिन विकासशील विचार पर्याप्त रूप से इंगित करते हैं कि नियम/निर्देश, जो पदोन्नति के लिए विचार सहित सेवा की शर्तों पर प्रभाव या प्रत्यक्ष प्रभाव डालेंगे, उन्हें इस तरह से अधिसूचित किया जाना चाहिए ताकि यह अनुमान लगाया जा सके कि कानून की जानकारी होनी चाहिए सभी। इस तरह की धारणा केवल तभी बनाई जा सकती है जब अपेक्षित निर्देश/दिशानिर्देश या नियम अधिसूचित किए जाते हैं और/या विभाग को उसके अभ्यास और प्रक्रिया के अनुसार अवगत कराया जाता है, प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत प्रशासनिक अधिकारियों पर यह सुनिश्चित करने का दायित्व डालेंगे कि भौतिक मामले सेवा की शर्तों को प्रभावित करने वाले मामले को प्रभावित व्यक्तियों के ध्यान में लाया जाना चाहिए। यह और भी अधिक होगा जहां एक प्रविष्टि जो अन्यथा किसी अधिकारी के लिए प्रतिकूल

नहीं है लेकिन फिर भी कर्मचारी के विचार और पदोन्नति की संभावना में कुछ बाधा उत्पन्न होने की संभावना है। यदि कर्मचारी अनजान है और कड़ी मेहनत करने पर भी उसे ऐसे प्रतिबंधों/शर्तों या लगाए जाने के बारे में पता नहीं चल पाता है, तो उस स्थिति में यह वर्तमान समय में सेवा के उस वर्ग के साथ अन्याय होगा, जहां पदोन्नति स्वयं इतनी प्रतिस्पर्धी है और इसकी आवश्यकता है कर्मचारी की ओर से काफी कड़ी मेहनत और तुलनात्मक योग्यताएँ। यह उचित और उचित होगा कि ऐसे मामले, विशेष रूप से किसी कर्मचारी के दिशानिर्देश और नीतियां, प्रकाशन के संदर्भ में या कम से कम विभाग को प्रसारित करने के संदर्भ में संबंधित कर्मचारी को अवगत कराया जाना चाहिए। प्रशासनिक प्राधिकारी और/या नियोक्ता को अपने कर्मचारियों के प्रति संवेदनशील और निष्पक्ष रवैया अपनाना होगा ताकि उचित नियोक्ता और कर्मचारी संबंधों की बुनियादी बातों को पूरा किया जा सके।

(para 16)

इसके अलावा, यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि प्रकाशन और/या सेवा के नियमों और शर्तों के बारे में जागरूकता दोहरे उद्देश्य को पूरा करेगी। एक यह कि प्रत्येक कर्मचारी को पता होगा कि उसे पदोन्नति के लिए विचार किए जाने के लिए कैसा प्रदर्शन करना चाहिए और दूसरा यह कि उसे अपनी गलती के बारे में पता चल जाएगा और उसे अपने प्रदर्शन में सुधार करने का उचित मौका मिलेगा। इससे निष्पक्ष प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा मिलेगा और साथ ही न्यायसंगत और उचित विचार के तत्व भी संतुष्ट होंगे। किसी भी मामले में, हमें इसमें कोई नुकसान नहीं दिखता है यदि विशेष रूप से नियमों की पुष्टि में लिए गए नीतिगत निर्णय, जब वे सेवा के पूरे वर्ग को प्रभावित करते हैं, संबंधित को जल्द से जल्द अवगत करा दिया जाए। याचिकाकर्ता ने एक विशिष्ट दावा किया है कि 1996 और 1998 के उच्च न्यायालय के निर्णयों को न तो अधिसूचित किया गया और न ही प्रसारित किया गया और इस तरह के गैर-प्रसारण ने याचिकाकर्ता के अधिकार पर प्रतिकूल प्रभाव डाला है। यदि उसे ऐसे निर्देशों या मानदंडों के अस्तित्व के बारे में पता होता तो उसने अपने कामकाज में बेहतर प्रदर्शन सहित नियमों के अनुसार उसके लिए उपलब्ध उचित उपायों का सहारा लिया होता।

(para 17)

इसके अलावा, यह , यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि वर्तमान मामले में उत्पन्न विवाद को पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय बनाम ईश्वर चंदर जैन, 1999 के एलपीए संख्या 148 के मामले में डिवीजन बेंच के फैसले से सुलझा लिया गया है। डिवीजन बेंच ने वैधता पर जाए बिना या 1996 के न्यायालय के निर्णय के विपरीत, यह माना गया कि टिप्पणियाँ पूर्ण न्यायालय के समक्ष किसी भी सामग्री के अभाव में इसे डाउनग्रेड नहीं किया जा सकता। यह निर्णय न केवल स्वयं एक पूर्ण दिशानिर्देश होगा बल्कि उच्च

न्यायालय के लिए बाध्यकारी होगा, क्योंकि यह अंतिम रूप ले चुका है। एक बार जब उच्च न्यायालय ने फैसले को स्वीकार कर लिया, तो यह समान रूप से स्थित व्यक्तियों पर इसे लागू करने का दायित्व अर्जित करता है, खासकर जहां प्रभावित अधिकारी इसके संदर्भ में राहत देने के लिए उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाते हैं।

(para 19)

इसके अलावा, यह भी अभिनिर्धारित किया गया है कि कानून व्यर्थ में कुछ भी आदेश नहीं देता है। एक बार जब पक्षों की दलीलों पर विचार कर लिया गया और फैसला सुनाकर निपटा दिया गया, जो अंतिम रूप ले चुका है, तो इसे लागू करना सभी संबंधित पक्षों का पवित्र दायित्व होगा। न्यायालय मुख्य रूप से कानूनी संरक्षण या राज्य की विधायिका और कार्यपालिका को उनकी शक्ति के भीतर और जनता के हित में सीमित रखने के उद्देश्य से कार्यों का निर्वहन करता है। निर्णय कहते हैं कि कानून उसी रूप में मौजूद है और मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर लागू होता है। अधिकारियों के बीच असंतोष और हताशा से बचने के लिए, जो स्वयं न्यायिक कार्यों का निर्वहन कर रहे हैं, उन्हें इस तरह के दायित्व के बारे में जागरूक किया जाना चाहिए। प्रशासनिक शक्तियों का प्रयोग अंतर्निहित सावधानी और प्रतिबंधों के साथ किया जाना चाहिए ताकि इससे कानून का उल्लंघन न हो। लेक्स इस्ट सैंक्टियो सैंक्ट्स, जुबेंस ऑनेस्टा और प्रोहिबेंस कॉन्ट्रारिया।

(para 23)

जे.पी.एस. पटवालिया वरिष्ठ अधिवक्ता, टी.पी.एस. चावला के साथ , याचिकाकर्ता की ओर से ।

वरिष्ठ अधिवक्ता राजीव आत्मा राम, सुश्री मधु दयाल के साथ, प्रतिवादी की ओर से।

निर्णय

न्यायमूर्ति स्वतंतर कुमार

1. भारत के संविधान के अनुच्छेद 226/227 के तहत इस याचिका में, याचिकाकर्ता श्री ए.डी. गौड़, सदस्य, हरियाणा न्यायिक अधीनस्थ सेवाओं ने प्रार्थना की है कि पूर्ण के निर्णय को रद्द करने के लिए एक उचित रिट, विशेष रूप से सर्टिओरारी की प्रकृति में, जारी की जाए। न्यायालय ने 3 दिसंबर 1998 को आयोजित अपनी बैठक में प्रशासनिक पक्ष पर विचार किया, जिसके तहत

वर्ष 1997-98 के लिए उनकी वार्षिक गोपनीय रिपोर्ट को "बी" (अच्छा) से घटाकर "बी" (संतोषजनक) कर दिया गया ।

याचिकाकर्ता ने पूर्ण न्यायालय के इस फैसले को प्रशासनिक पक्ष में इस आधार पर चुनौती दी है कि यह मनमाना है, सेवा न्यायशास्त्र की ज्ञात सिद्धांतों और **ईश्वर चंदर जैन बनाम पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय** सिविल रिट याचिका संख्या 4941/1993 पर 10 सितंबर, 1998 के मामले में न्यायिक पक्ष पर उच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित कानून के विपरीत है।

2. इस विवाद के गुण-दोष की जांच करने के लिए, हमारे लिए इस याचिका को जन्म देने वाले आवश्यक तथ्यों का उल्लेख करना उचित होगा।

3. याचिकाकर्ता को दिसंबर, 1989 में हरियाणा अधीनस्थ न्यायिक सेवा के सदस्य के रूप में चुना गया था। याचिकाकर्ता के अनुसार, उनके शामिल होने के बाद से, वह कुशलतापूर्वक, लगन से और अपने वरिष्ठों की संतुष्टि के लिए अपना कर्तव्य निभा रहे हैं। उनकी सेवा अवधि के दौरान उनके विरुद्ध कोई विभागीय कार्रवाई नहीं की गई और न ही कोई शिकायत संबंधित समय पर लंबित थी। वर्ष 1997-98 के दौरान, जब याचिकाकर्ता को अतिरिक्त सिविल जज (सीनियर डिवीजन), पिहोवा के रूप में तैनात किया गया था, तब उनके न्यायालय का निरीक्षण माननीय प्रशासनिक न्यायाधीश द्वारा किया गया था। हालाँकि निरीक्षण अवधि के दौरान उन्हें कुछ भी प्रतिकूल नहीं बताया गया, लेकिन याचिकाकर्ता रिट याचिका के अनुबंध पी/1 दिनांक 27 जनवरी, 1999 का पत्र प्राप्त करके हैरान रह गए। उक्त ज्ञापन इस प्रकार है:-

> संदर्भ: 31 मार्च, 1998 (1997-98) को समाप्त होने वाले वर्ष के लिए दर्ज की गई वार्षिक गोपनीय टिप्पणियाँ।
>
> ज्ञापन
>
> आपको सूचित किया जाता है कि माननीय मुख्य न्यायाधीश और न्यायाधीशों ने 31 मार्च, 1998 (1997-98) को समाप्त होने वाले आपके कार्य और आचरण पर निम्नलिखित टिप्पणियाँ दर्ज करने की कृपा की है।
>
> 1997-98 बी-संतोषजनक।
>
> (एसडी)

रजिस्ट्रार.

बताई गई 'बी' संतोषजनक टिप्पणियों से व्यथित होकर, याचिकाकर्ता ने 8 फरवरी, 1999 को एक अभ्यावेदन दिया, और प्रतिकूल सामग्री, यदि कोई हो, की प्राप्ति पर एक विस्तृत व्यापक और अभ्यावेदन दाखिल करने का अपना अधिकार भी सुरक्षित रखा, जिसके आधार पर उक्त टिप्पणी पूर्ण न्यायालय द्वारा दर्ज की गई थी। कोई प्रतिकूल सामग्री प्रदान नहीं की गई थी, लेकिन इस याचिका के लिए याचिकाकर्ता, अनुबंध पी/2 का प्रतिनिधित्व, उच्च न्यायालय के दिनांक 19 फरवरी, 1999 के आदेश, अनुबंध पी/3 द्वारा खारिज कर दिया गया था। हालांकि आदेशों में याचिकाकर्ता के अभ्यावेदन को खारिज करने का कोई कारण नहीं बताया गया है। उन्होंने 20 फरवरी, 1999 को फिर से विस्तृत अभ्यावेदन दायर किया और दोहराया कि माननीय निरीक्षण न्यायाधीश ने याचिकाकर्ता के काम पर पूर्ण संतुष्टि व्यक्त की थी और वास्तव में प्रसन्न थे। उनके अनुसार, उन्हें बाद में पता चला कि निरीक्षण न्यायाधीश ने याचिकाकर्ता को वर्ष 1997-98 के लिए "बी" + (अच्छा) ग्रेड दिया है और पूर्ण न्यायालय द्वारा इसे "बी" (संतोषजनक) के रूप में डाउनग्रेड नहीं किया जा सकता है। पूर्ण न्यायालय के समक्ष अवसर और बिना किसी सामग्री के। वर्ष 2002 में याचिकाकर्ता की पदोन्नति होनी थी और उससे कनिष्ठ अधिकारियों को पदोन्नति दी गई। इसके बाद याचिकाकर्ता को पता चला कि उच्च न्यायालय द्वारा प्रदान किए गए मानदंडों के अनुसार, पदोन्नति के लिए पिछले सात वर्षों में से कम से कम पांच अच्छे एसीआर आवश्यक हैं। यह तथ्य याचिकाकर्ता को पहले से ज्ञात नहीं था, इसलिए पदोन्नति को अस्वीकार करने के लिए इस पर भरोसा नहीं किया जा सकता था और वर्ष 1997-98 के लिए एसीआर की डाउनग्रेडिंग के संबंध में याचिकाकर्ता की शिकायत गंभीर चिंता का विषय बन गई। याचिकाकर्ता ने इस याचिका में यह भी कहा है कि पूर्ण न्यायालय ने बाद में उपरोक्त संदर्भित प्रस्ताव के आधार पर अधिकारियों की एसीआर को डाउनग्रेड नहीं करने का निर्णय लिया था और वास्तव में उस संबंध में एक नया प्रस्ताव पारित किया गया था। याचिकाकर्ता ने उच्च न्यायालय के साथ-साथ माननीय सर्वोच्च न्यायालय के विभिन्न निर्णयों पर भरोसा करते हुए तर्क दिया कि वर्ष 1997-98 के लिए याचिकाकर्ता की गोपनीय रिपोर्ट को डाउनग्रेड करने में पूर्ण न्यायालय की कार्रवाई मनमानी है। याचिकाकर्ता ने उसी टिप्पणी के खिलाफ 24 सितंबर, 2002 को एक और अभ्यावेदन भी दायर किया, जिस पर उच्च न्यायालय ने विचार किया और 22 फरवरी, 2003 के अपने संकल्प के तहत खारिज कर दिया। इन आधारों पर, याचिकाकर्ता ने आदेशों से सीमित राहत का दावा किया है उनके दिनांक 19 फरवरी, 1999, 7 जून, 1999 और 22 फरवरी, 2003

के अभ्यावेदन अनुलग्नक पी/3, पी/5 और पी/7 क्रमशः को अस्वीकार करते हुए रद्द किया जाए और वर्ष 1997-98 के लिए उनकी गोपनीय रिपोर्ट को बी+" (अच्छा) पढ़ा और समझा जाए। याचिकाकर्ता ने यह भी प्रार्थना की है कि इस संबंध में उच्च न्यायालय द्वारा एसीआरएस को अपग्रेड करने के लिए बनाई गई अप्रकाशित और अप्रकाशित नीति/नियमों को रद्द कर दिया जाए और असंवैधानिक घोषित किया जाए।

4. नोटिस पर, उच्च न्यायालय ने एक विस्तृत उत्तर दायर किया, जिसमें रिट याचिका की पोषणीयता के संबंध में प्रारंभिक आपत्ति भी ली गई, क्योंकि याचिकाकर्ता के किसी भी मौलिक या वैधानिक अधिकार का उल्लंघन नहीं किया गया है। यह कहा गया था कि वर्तमान याचिका विलंब और विलंब से बाधित है, क्योंकि याचिकाकर्ता वर्ष 2003 में 1999 के आदेश को चुनौती दे रहा है। उच्च न्यायालय द्वारा दायर लिखित बयान में एक और आपत्ति ली गई है कि याचिका खराब है आवश्यक पक्षों का गैर-जुड़ाव क्योंकि जिन व्यक्तियों को पदोन्नत किया गया था उन्हें याचिका में प्रतिवादी के रूप में शामिल नहीं किया गया है।

5. गुण-दोष के आधार पर, तथ्यों पर अधिक विवाद नहीं है। बताया गया कि याचिकाकर्ता न्यायिक सेवा में शामिल हो गया। एसीआर दर्ज करने और दिशानिर्देश तैयार करने के लिए उच्च न्यायालय द्वारा एक उप-समिति का गठन किया गया था। उप-समिति ने 15 फरवरी, 1996 को अपनी रिपोर्ट के माध्यम से वार्षिक गोपनीय रिपोर्ट दर्ज करने के लिए माप दंड अपनाने की सिफारिश की थी जिसे पूर्ण न्यायालय ने स्वीकार कर लिया था। समिति की रिपोर्ट का प्रासंगिक भाग इस प्रकार है:-

> (iii) यदि निरीक्षण न्यायाधीश ने वार्षिक गोपनीय रिपोर्ट में किसी अधिकारी को पिछले वर्ष की पूर्ण न्यायालय ग्रेडिंग की तुलना में उच्च ग्रेडिंग दी है, तो पूर्ण न्यायालय ग्रेडिंग प्रश्नगत वर्ष के लिए वही रहेगी, जैसी उसे पिछले वर्ष में दी गई थी।

उप-समिति की इस रिपोर्ट को पूर्ण न्यायालय ने अपने निर्णय दिनांक 25 जुलाई, 1996 द्वारा अनुमोदित किया था और ये दिशानिर्देश वर्ष 1995-96 से वर्ष 1997-98 तक लागू थे और सभी व्यक्तियों पर समान रूप से थे । यह विवादित नहीं है कि माननीय निरीक्षण न्यायाधीश ने वर्ष 1997-98 के लिए टिप्पणी दर्ज की और अधिकारी को नीति के संदर्भ में बी + गुड के रूप में वर्गीकृत किया और वर्ष 1996-97 के लिए याचिकाकर्ता की ग्रेडिंग संतोषजनक थी। , इसे उसी टिप्पणी के अनुसार डाउग्रेड किया गया था। याचिकाकर्ता द्वारा समय-समय पर प्रस्तुत सभी अभ्यावेदन खारिज कर दिए गए। उच्च न्यायालय की एक अन्य उप-समिति ने 1 दिसंबर, 1998

को अपनी रिपोर्ट में सिफारिश की थी कि पिछले मानदंडों को लागू नहीं किया जा सकता है और निरीक्षण न्यायाधीश द्वारा दी गई ग्रेडिंग को तब तक अपनाया जाएगा जब तक कि पूर्ण न्यायालय के समक्ष इसे बदलने के लिए कोई सामग्री न हो। रिपोर्ट का प्रासंगिक भाग इस प्रकार है:-

> "निरीक्षण न्यायाधीश द्वारा दी गई ग्रेडिंग को पूर्ण न्यायालय द्वारा अपनाया जाना चाहिए, जब तक कि माननीय निरीक्षण न्यायाधीश द्वारा दी गई टिप्पणियों को अपग्रेड या डाउनग्रेड करने के लिए कुछ सामग्री उसके सामने न रखी जाए"।

इस रिपोर्ट को पूर्ण न्यायालय ने 21 दिसंबर, 1998 को अपनी बैठक में स्वीकार कर लिया। इसके बाद भी याचिकाकर्ता द्वारा दायर अभ्यावेदन को सक्षम प्राधिकारी द्वारा खारिज कर दिया गया। उच्च न्यायालय की ओर से उठाया गया मुख्य आधार यह है कि पूर्ण न्यायालय का 1 दिसंबर, 1998 का निर्णय अपने संचालन में संभावित था और इस प्रकार याचिकाकर्ता किसी भी लाभ का दावा नहीं कर सकता है। यह भी कहा गया है कि उच्च न्यायालय की कार्रवाई न तो मनमानी है और न ही किसी नियम या विनियम के विपरीत है।

6. बहस के दौरान, अदालत ने उत्तरदाताओं को अदालत में रिकॉर्ड पेश करने का निर्देश दिया। रिकार्ड तैयार किये गये। इस रिट याचिका में दिए गए तथ्यात्मक कथन शायद ही विवाद में हों। इस रिट याचिका में इस न्यायालय द्वारा जिन बुनियादी प्रश्नों के निर्धारण की आवश्यकता है वे इस प्रकार है:-

   (I) क्या 3 दिसंबर 1998 को हुई बैठक में याचिकाकर्ता की वर्ष 1997-98 की गोपनीय रिपोर्ट को "बी" (अच्छा) से घटाकर "बी" (संतोषजनक) करने की उच्च न्यायालय की कार्रवाई प्रभावित हुई है? किसी भी दुर्बलता से और अलग किये जाने योग्य है?

   (II) क्या मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में पूर्ण न्यायालय का 21 दिसंबर, 1998 का निर्णय संभावित है?

   इससे पहले कि हम उपरोक्त प्रश्न पर पार्टियों द्वारा उठाए गए कानूनी प्रस्तुतियों पर चर्चा करने के लिए आगे बढ़ें, हम प्रतिवादी उच्च न्यायालय द्वारा उठाए गए प्रारंभिक आपत्तियों से निपटना पसंद करेंगे।

7. हमारी राय में, रिट याचिका न तो देरी और देरी से ग्रस्त है और न ही आवश्यक पक्षों के गैर-जुड़ने के लिए खराब है। यह विवाद में नहीं है, दिनांक 27 जनवरी, 1999 के पत्र के माध्यम से।

रिट याचिका के अनुलग्नक पी/1 में, याचिकाकर्ता को वर्ष 1997-98 के लिए पूर्वोक्त-संदर्भित टिप्पणियों को डाउनग्रेड करते हुए सूचित किया गया था।

8. याचिकाकर्ता ने बिना किसी देरी के 8 फरवरी 1999 को उक्त टिप्पणी के विरुद्ध अभ्यावेदन प्रस्तुत किया, जिसे उच्च न्यायालय ने खारिज कर दिया। इसके बाद याचिकाकर्ता द्वारा 20 फरवरी, 1999 को फिर से एक विस्तृत अभ्यावेदन दायर किया गया जिसमें दो बुनियादी सिद्धांतों को उठाया गया कि उसे कोई प्रतिकूल सामग्री नहीं दी गई है और उसे माननीय निरीक्षण न्यायाधीश द्वारा दर्ज की गई टिप्पणियों के बारे में पता चल गया है। इस अभ्यावेदन को भी जून, 1999 में खारिज कर दिया गया था। याचिकाकर्ता ने कुछ समय तक इंतजार किया और जब उसके कनिष्ठों को पदोन्नत किया गया, तो याचिकाकर्ता को नजरअंदाज करते हुए, उसने 24 सितंबर, 2002 को फिर से अभ्यावेदन दायर किया, क्योंकि पदोन्नति सितंबर, 2002 में ही हुई थी। 22 फरवरी, 2003 को प्रतिनिधित्व खारिज कर दिया गया और 29 मई, 2003 को याचिकाकर्ता ने वर्तमान रिट याचिका दायर की। याचिकाकर्ता पूरे समय अपने अधिकार के प्रति सतर्क रहा है, बेशक, वह वर्ष 1999 में अदालत तक नहीं गया और कुछ समय तक इंतजार किया। हमें नहीं लगता कि एक न्यायिक अधिकारी होने के नाते याचिकाकर्ता की ओर से यह अनुचित आचरण था। याचिकाकर्ता के इस आचरण को रिट याचिका में उसके द्वारा दिए गए कथनों के आलोक में देखा जाना चाहिए कि पदोन्नति के लिए दिशानिर्देश या मानदंड न्यायिक अधिकारियों को अधिसूचित, प्रकाशित या प्रसारित नहीं किए गए थे। इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि याचिकाकर्ता को इस रिपोर्ट के परिणामों के बारे में तब तक पता नहीं था जब तक कि उसके कनिष्ठों को पदोन्नत नहीं किया गया और उसे नजरअंदाज कर दिया गया।

9. इस याचिका में, याचिकाकर्ता ने सितंबर, 2002 में उच्च न्यायिक सेवाओं में की गई पदोन्नति को रद्द करने के संबंध में कोई दावा नहीं उठाया है और अपनी राहत केवल वर्ष 1997-1998 के लिए गोपनीय रिपोर्ट की शुद्धता तक ही सीमित रखी है। एक बार, पदोन्नत उम्मीदवारों के खिलाफ कोई राहत का दावा नहीं किया जाता है और याचिकाकर्ता भी पदोन्नति देने के लिए कोई प्रार्थना नहीं करता है, हमारे विचार में, चयनित उम्मीदवार इस याचिका के लिए न तो आवश्यक हैं और न ही उचित पक्ष हैं।

10. नतीजतन, उच्च न्यायालय द्वारा अपने लिखित बयान में उठाई गई ये दोनों प्रारंभिक आपत्तियां निराधार हैं और खारिज की जाती हैं।

11. अब हम ऊपर दिए गए प्रश्नों का उत्तर देने के लिए आगे बढ़ते हैं।

क्या 3 दिसंबर 1998 को हुई बैठक में याचिकाकर्ता की वर्ष 1997-98 की गोपनीय रिपोर्ट को "बी" (अच्छा) से घटाकर "बी" (संतोषजनक) करने की उच्च न्यायालय की कार्रवाई प्रभावित हुई है? किसी भी दुर्बलता से और अलग किये जाने योग्य है?

12. सबसे पहले, हम याचिकाकर्ता की गोपनीय रिपोर्ट का उल्लेख कर सकते हैं, जो सुनवाई के दौरान अदालत के समक्ष पेश की गई थी, जो इस प्रकार है-

वर्ष	उच्च न्यायालय की टिप्पणियाँ
1989-90	बी-संतोषजनक
1990-91	बी-संतोषजनक
1991-92	बी-संतोषजनक
1992-93	बी-प्लस (अच्छा)
1993-94	बी-प्लस (अच्छा)
1994-95	बी औसत
1995-96	बी-संतोषजनक
1996-97	बी-संतोषजनक
1997-98	बी-संतोषजनक
1998-99	बी-प्लस (अच्छा)
1999-2000	बी-प्लस (अच्छा)

2000-2001	बी-प्लस (अच्छा)
2001-2002	बी-औसत"

13. उपरोक्त में से, हम केवल वर्ष 1997-1998 के लिए सक्षम प्राधिकारी द्वारा दर्ज की गई वार्षिक गोपनीय टिप्पणियों से चिंतित हैं। इस तथ्य पर कोई विवाद नहीं है कि माननीय निरीक्षण न्यायाधीश ने याचिकाकर्ता को उस अवधि के लिए बी+ (अच्छा) के रूप में वर्गीकृत किया था। हालाँकि, 25 जुलाई, 1996 की बैठक में पूर्ण न्यायालय द्वारा अनुमोदित मानदंडों के आधार पर, जिसमें न्यायालय ने 15 फरवरी, 1996 की उप समिति की रिपोर्ट को स्वीकार कर लिया था, पूर्ण न्यायालय ने गोपनीय याचिकाकर्ता के रिकॉर्ड को "बी" (संतोषजनक) के रूप में डाउनग्रेड कर दिया था। पूर्ण न्यायालय ने पैरा (iii) में अपने द्वारा अपनाई गई गाइड-लाइनों को ध्यान में रखते हुए और वर्ष 1996-97 के लिए उन्हें दी गई ग्रेडिंग को ध्यान में रखते हुए याचिकाकर्ता को वर्ष 1997-1998 के लिए "बी" (संतोषजनक) के रूप में वर्गीकृत किया था। पूर्ण न्यायालय द्वारा अपनाए गए दिशानिर्देशों और मानदंडों के प्रासंगिक खंड के तहत, यदि निरीक्षण न्यायाधीश ने पिछले वर्ष की पूर्ण न्यायालय ग्रेडिंग की तुलना में वार्षिक गोपनीय रिपोर्ट में किसी अधिकारी को उच्च ग्रेडिंग दी है तो पूर्ण न्यायालय ग्रेडिंग प्रश्नगत वर्ष के लिए वही रहेगा, जो उसे पिछले वर्ष दिया गया था। यह अकेले ही संबंधित वर्ष के लिए याचिकाकर्ता की वार्षिक गोपनीय रिपोर्ट को डाउनग्रेड करने का आधार है। उच्च न्यायालय की ओर से दायर विस्तृत लिखित बयान में यह कहीं नहीं कहा गया है कि पूर्ण न्यायालय के समक्ष ऐसी कोई सामग्री थी जिसके आधार पर याचिकाकर्ता की रिपोर्ट को डाउनग्रेड किया गया था। दूसरे शब्दों में, याचिकाकर्ता के नुकसान के लिए गोपनीय रिपोर्ट में भिन्नता का एकमात्र कारण और आधार वर्ष 1996 में जारी गाइड-लाइनों का पालन था।
14. हमारे सामने प्रस्तुत रिकॉर्ड से पता चलता है कि 6 अप्रैल, 1998 को, जिला कुरूक्षेत्र के माननीय प्रशासनिक न्यायाधीश ने 31 मार्च, 1998 को समाप्त होने वाली अवधि के लिए याचिकाकर्ता का गोपनीय रिकॉर्ड दर्ज किया था। इस रिपोर्ट में, उसे बी+ ग्रेड (अच्छा) दिया गया था। । यह रिपोर्ट 31 दिसंबर, 1998 को प्रशासनिक समिति के समक्ष रखी गई और उसके बाद 15 जनवरी, 1999 को इसे प्रशासनिक समिति की सिफारिश को स्वीकार करने के लिए पूर्ण न्यायालय के समक्ष रखा गया। जैसा कि पहले ही देखा जा चुका है, पूर्ण न्यायालय ने नीतिगत निर्णय को लागू करते हुए याचिकाकर्ता की एसीआर को घटाकर बी (संतोषजनक) करने का निर्णय लिया है, जैसा कि

पहले ही देखा जा चुका है, पूर्ण न्यायालय ने 21 तारीख की अपनी बैठक में इसे रद्द कर दिया था। दिसंबर, 1998. मामले का तथ्य यह है कि प्रशासनिक समिति या पूर्ण न्यायालय के समक्ष ऐसी कोई सामग्री नहीं थी जो याचिकाकर्ता की गोपनीय रिपोर्ट को डाउनग्रेड करने के लिए वैध आधार बन सके।

15. जैसा कि उपरोक्त देखी गई तारीखों से स्पष्ट है, याचिकाकर्ता की गोपनीय रिपोर्ट को काफी अवधि के बाद डाउनग्रेड किया गया था और यहां तक कि बाद के वर्षों यानी 1998-1999, 1999-2000 के दौरान और 2000-2001 के लिए याचिकाकर्ता को बी+ के रूप में वर्गीकृत किया गया था। (अच्छा) प्रशासनिक न्यायाधीश द्वारा दी गई ग्रेडिंग पर पूर्ण न्यायालय द्वारा ही। हमारे लिए इन मामलों पर बहुत विस्तार से चर्चा करना बिल्कुल आवश्यक नहीं है क्योंकि वर्तमान मामले में शामिल कानून का महत्वपूर्ण प्रश्न एल.पी.ए. में लेटर्स पेटेंट बेंच द्वारा दिए गए फैसले द्वारा तथ्यों और कानून पर स्पष्ट रूप से कवर किया गया है। 1999 की संख्या 148 जिसका शीर्षक **पंजाब और हरियाणा है उच्च न्यायालय बनाम ईश्वर चंद्र जैन** का निर्णय 24 अगस्त, 2000 को हुआ। इस निर्णय के माध्यम से, इस न्यायालय की खंडपीठ ने 10 सितंबर, 1998 को निर्णयित सिविल रिट याचिका संख्या 4941/1993 में पारित एकल पीठ के फैसले की पुष्टि की। कुछ इसी तरह परिस्थितियों में, लेटर्स पेटेंट बेंच ने निम्नानुसार निर्णय लिया:-

> "हमने संबंधित प्रस्तुतियों पर विचारपूर्वक विचार किया है। संविधान की योजना उच्च न्यायालयों के अपने अधीनस्थ न्यायालयों पर नियंत्रण की परिकल्पना करती है और इस नियंत्रण को प्रभावी ढंग से प्रयोग करने के लिए, प्रत्येक उच्च न्यायालय ने अधीनस्थ न्यायालयों के निरीक्षण के लिए अपनी स्वयं की प्रणाली विकसित की है। इसके लिए। इस न्यायालय में जिस प्रणाली का पालन किया जा रहा है, उसमें एक वर्ष की अवधि के लिए एक उच्च न्यायालय के न्यायाधीश द्वारा एक सत्र प्रभाग के निरीक्षण की परिकल्पना की गई है। आमतौर पर, उस न्यायाधीश को विशेष सत्र के अधिकारियों के प्रदर्शन को देखने और मूल्यांकन करने का अवसर मिलता है। डिवीजन और उसके पास अकेले कार्य और प्रदर्शन और कानून के ज्ञान आदि का समग्र मूल्यांकन करके उनकी गोपनीय रिपोर्ट दर्ज करने का अधिकार है। यदि कोई न्यायाधीश विशेष वर्ष के बीच में सेवानिवृत्त हो जाता है, तो दूसरा न्यायाधीश निरीक्षण न्यायाधीश के रूप में कार्य करता है। उस वर्ष के शेष भाग के लिए और उस स्थिति में, वह अधिकारियों की एसीआर भी दर्ज कर सकता है। हालांकि, इसका मतलब यह नहीं है कि मामले में पूर्ण न्यायालय की कोई भूमिका नहीं है और वह दर्ज की गई टिप्पणियों को मंजूरी देने के लिए बाध्य है। निरीक्षण

न्यायाधीश द्वारा बिना किसी संशोधन के। बल्कि, पूर्ण न्यायालय को निरीक्षण न्यायाधीश द्वारा दर्ज की गई टिप्पणियों में उचित संशोधन करने का अधिकार है यदि उसके सामने रखी गई सामग्री इस तरह के बदलाव या संशोधन को उचित ठहराती है। **ईश्वर चंदर जैन बनाम पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय** (सुप्रा) के मामले में, उच्चतम न्यायालय ने इस न्यायालय द्वारा उसकी रिट याचिका को खारिज करने के आदेश के खिलाफ प्रतिवादी द्वारा दायर अपील पर फैसला करते हुए, उसकी शिकायत पर ध्यान दिया था कि उसकी एसीआर में प्रविष्टि के लिए वर्ष 1984-85 को पूर्ण न्यायालय द्वारा बिना किसी तुक या कारण के डाउनग्रेड कर दिया गया था और निम्नानुसार देखा गया था:-

> वर्ष 1984-85 के लिए प्रवेश 15 अप्रैल 1985 को निरीक्षण न्यायाधीश रहे जस्टिस एस.पी. गोयल द्वारा प्रदान किया गया। उन्होंने अपीलकर्ता को 'बी' प्लस से सम्मानित किया जिसका मतलब है कि अपीलकर्ता का काम अच्छा था। लेकिन इस प्रविष्टि पर उच्च न्यायालय द्वारा विचार नहीं किया जा सका क्योंकि उसने पहले ही 21 मार्च, 1985 को अपीलकर्ता की सेवाओं को समाप्त करने का निर्णय ले लिया था। हम यह जानकर व्यथित हैं कि जब 1984-85 की उपरोक्त प्रविष्टि उच्च न्यायालय के पूर्ण न्यायालय के समक्ष विचार के लिए आई, तो उसने इसे संशोधित किया और प्रविष्टि को 'बी' प्लस से घटाकर 'सी' कर दिया, जिसका अर्थ है अपीलकर्ता की कार्य असंतोषजनक था. सुनवाई के दौरान हमने उच्च न्यायालय की ओर से उपस्थित विद्वान वकील से ऐसी सामग्री प्रस्तुत करने के लिए कहा जिसके आधार पर उच्च न्यायालय ने वर्ष 1984-85 के लिए न्यायमूर्ति एस.पी. गोयल द्वारा दी गई प्रविष्टि को संशोधित किया, लेकिन वह समर्थन के लिए हमारे समक्ष कोई भी सामग्री रखने में असमर्थ रहे। प्रविष्टि को संशोधित करने में उच्च न्यायालय का निर्णय। इसलिए प्रविष्टि में संशोधन बिना किसी सामग्री के है और कानून की दृष्टि से टिकाऊ नहीं है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि जहां तक अपीलकर्ता के गोपनीय रोल पर वार्षिक प्रविष्टि का संबंध है, उसके खिलाफ कोई सामग्री नहीं थी जो यह दिखा सके कि अपीलकर्ता का कार्य और आचरण असंतोषजनक था।

आर.जी. के माध्यम से पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय बनाम ईश्वर चंदर जैन[1] में सुप्रीम कोर्ट के आधिपत्य ने वर्ष 1991-92 के लिए प्रतिवादी की एसीआर में दर्ज प्रविष्टियों के संदर्भ में इस मुद्दे पर फिर से विचार किया और निम्नानुसार देखा:

> "इस अदालत ने अपनी परिवीक्षा समाप्त करने के खिलाफ जैन द्वारा दायर पहले की अपील में कहा था कि उच्च न्यायालय द्वारा प्रविष्टि में संशोधन बिना किसी सामग्री के था और कानून में टिकाऊ नहीं था। इसका मतलब था कि सुप्रीम कोर्ट ने जैन की एसीआर में उनकी ग्रेडिंग को बहाल कर दिया था। वर्ष 1984-85 को 'बी'+अच्छा के रूप में दर्शाया गया है। रजिस्ट्री द्वारा तैयार किए गए सारांश में इसका कोई संकेत नहीं है, जिसने निश्चित रूप से पूर्ण न्यायालय के कई न्यायाधीशों को गुमराह किया होगा। वर्ष 1992-93, 1993-94, 1994-95 और 1995-96 के नौ महीनों के लिए कोई एसीआर दर्ज नहीं किया गया है जब पूर्ण न्यायालय की बैठक 12 दिसंबर, 1995 को हुई थी। 22 सितंबर, 1995 को अपनी पिछली बैठक में इसने जैन को 'सी'-अखंडता संदिग्ध' के रूप में ग्रेड करते हुए वर्ष 1991-92 के लिए एसीआर दर्ज किया था। जैन 'सी' के रूप में-अखंडता संदिग्ध. इस निष्कर्ष पर पहुंचने में फुल कोर्ट ने 22 फरवरी, 1992 को निरीक्षण न्यायाधीश द्वारा तैयार की गई निरीक्षण रिपोर्ट पर भरोसा किया, जहां उन्होंने जैन को 'अखंडता संदिग्ध' के रूप में वर्गीकृत किया और अपना नोट दिया, जिसे हमने ऊपर उद्धृत किया है। इस बारे में कोई सामग्री उपलब्ध नहीं है कि फरवरी 1992 की निरीक्षण रिपोर्ट पर सितंबर 1995 में पूर्ण न्यायालय द्वारा विचार क्यों किया गया और उस वर्ष से पूर्ण न्यायालय की बैठक आयोजित होने तक कोई निरीक्षण क्यों नहीं हो सका। निरीक्षण न्यायाधीश के निरीक्षण नोट से यह आभास होता है कि उन्होंने मार्च 1992 में ही जैन के न्यायालय का निरीक्षण किया था। निरीक्षण न्यायाधीश ने यह भी नोट किया कि कुछ शिकायतें थीं जो उनके खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही का विषय-वस्तु बनीं। यह भी सही प्रतीत नहीं होता क्योंकि निरीक्षण रिपोर्ट की तिथि तक जैन के विरुद्ध कोई अनुशासनात्मक कार्यवाही लंबित नहीं थी। शिकायतों का भी कोई विवरण नहीं था कि क्या ये लिखित या मौखिक थीं और क्या ये अधिकारी द्वारा किए गए न्यायिक कार्य से संबंधित थीं। कम से कम कुछ मामलों का उल्लेख किया जा

[1] J.T. 1999 (3) S.C. 266

सकता था जिनमें जैन को अनुचित तरीके से कार्य करते हुए पाया गया था जब बार के सदस्यों की ओर से कई शिकायतें थीं। निरीक्षण नोट निश्चित रूप से त्रुटिपूर्ण है और पूर्ण न्यायालय द्वारा यह दर्ज करने का आधार नहीं बन सकता कि अधिकारी की सत्यनिष्ठा संदिग्ध थी और उसे 'सी' ग्रेड दिया जाए। इसके अलावा, हमें बार में बताया गया था और इसका खंडन नहीं किया गया था कि निरीक्षण न्यायाधीश ने 21 नवंबर, 1991 को और तीन महीने के भीतर ही जींद जिले का कार्यभार संभाला था। 25 फरवरी 1992 को अपनी निरीक्षण रिपोर्ट दी। यह निश्चित रूप से संतोषजनक नहीं है. इसलिए, वर्ष 1991-92 की एसीआर को अलग रखा जाए।"

उत्तर प्रदेश जल निगम एवं अन्य बनाम प्रभात चन्द्र जैन और अन्य[2], में सुप्रीम कोर्ट ने संबंधित मुद्दे पर विचार किया एसीआर में दर्ज प्रविष्टियों में संशोधन/परिवर्तन करना निम्नानुसार मनाया गया:-

"स्थिति में गोपनीयता दर्ज करने वाले प्राधिकारी द्वारा आवश्यक सभी चीज़ों को संबंधित अधिकारी की व्यक्तिगत फ़ाइल पर इस तरह के डाउनग्रेडिंग के कारणों को दर्ज करना और सलाह के रूप में बदलाव के बारे में सूचित करना है। उन्हें बदलाव की एक सलाह के रूप में बताया गया. यदि आवश्यक भिन्नता अनुमत नहीं है, तो वार्षिक गोपनीय रिपोर्ट लिखने का उद्देश्य ही विफल हो जाएगा। एक इष्टतम स्तर हासिल करने के बाद, कर्मचारी अपनी ओर से अपने काम में ढिलाई बरत सकता है, अपनी एक लाइम उपलब्धि से निश्चिंत होकर आराम कर सकता है। यह एक अवांछनीय स्थिति होगी. फिर भी, प्रतिकूलता का दंश, सभी घटनाओं में, ऐसे बदलावों में प्रतिबिंबित नहीं होना चाहिए, अन्यथा उन्हें ऐसे ही संप्रेषित किया जाएगा। इस बात पर जोर दिया जा सकता है कि किसी दिए गए मामले में एक सकारात्मक गोपनीय प्रविष्टि भी खतरनाक रूप से प्रतिकूल हो सकती है और यह कहना कि प्रतिकूल प्रविष्टि हमेशा गुणात्मक रूप से हानिकारक होनी चाहिए, सच नहीं हो सकता है। मौजूदा मामले में, हमने पहले प्रतिवादी का सेवा रिकॉर्ड देखा है। परिवर्तन का कोई कारण नहीं बताया

[2] 1996 (1) S.L.R. 743

गया है। तुलनात्मक दृष्टि से निम्न ग्रेडिंग परिलक्षित होती है। यह टिक नहीं सकता"।

उपरोक्त निर्णयों में निर्धारित प्रस्तावों और इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि निरीक्षण न्यायाधीश द्वारा दर्ज की गई टिप्पणियों के संशोधन को उचित ठहराने वाले प्रतिवादी के काम और प्रदर्शन के बारे में पूर्ण न्यायालय के समक्ष कोई सामग्री नहीं रखी गई थी, विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा लिया गया दृष्टिकोण त्रुटिपूर्ण नहीं हो सकता है।

16. **यूपी जल निगम और अन्य बनाम प्रभात चंद्र जैन और अन्य** (सुप्रा) के मामले में, सर्वोच्च न्यायलय ने संबंधित अधिकारियों पर दोहरी जिम्मेदारी रखी। । पहला, गोपनीय रिपोर्ट में डाउनग्रेडिंग उसमें दर्ज कारणों के लिए होनी चाहिए और दूसरी बात यह कि संबंधित अधिकारी को भी इस तरह की डाउन ग्रेडिंग के बारे में सूचित किया जाना चाहिए। इस तरह के निर्देश के पीछे यह तर्कसंगत प्रतीत होता है कि किसी दिए गए मामले में, गोपनीय रिपोर्ट में एक प्रविष्टि जो प्रतिकूल नहीं लग सकती है, फिर भी पदोन्नति के मामले में अधिकारियों द्वारा अपनाए गए मानदंडों के चलते एक कर्मचारी की पदोन्नति की संभावनाओं पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकती है । एक कर्मचारी की सेवा की शर्त उसे पदोन्नति के मामलों में उचित और निष्पक्ष विचार के लिए वैध अधिकार प्रदान करती है, वह भी नियमों के अनुसार। हमारे समक्ष उच्च न्यायालय का रुख यह है कि उच्च पद पर पदोन्नति/पदनाम और 1996 में मानदंड को अपनाने और 1998 में इसे वापस लेने के उद्देश्य से उच्च न्यायालय द्वारा तैयार किए गए अनुदेशों/दिशानिर्देशों को न्यायिक सेवा के सदस्यों के ध्यान में लाने या परिचालित करने की आवश्यकता नहीं थीयह तर्क हमें प्रभावित नहीं करता है। सेवा न्यायशास्त्र ने हाल के समय में एक नया आयाम प्राप्त किया है। न्यायालयों के सुसंगत लेकिन विकासशील दृष्टिकोण पर्याप्त रूप से इंगित करते हैं कि नियम/अनुदेश, जिनका सेवा की स्थिति पर प्रभाव या प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ेगा, जिसमें पदोन्नति के लिए विचार भी शामिल है, उस कानून के बारे में सभी को पता होना चाहिए। ऐसी धारणा केवल तभी तैयार की जा सकती है जब अपेक्षित अनुदेश/दिशा-निर्देश या नियम अधिसूचित किए जाते हैं और/या विभाग को उसकी प्रथा और प्रक्रिया के अनुसार अवगत कराया जाता है, प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत प्रशासनिक प्राधिकारियों पर यह सुनिश्चित करने का दायित्व डालेंगे कि सेवा की स्थिति को प्रभावित करने वाले भौतिक मामलों को प्रभावित व्यक्तियों के ध्यान में लाया जाना चाहिए। यह तब और अधिक होगा जब एक प्रविष्टि जो अन्यथा किसी अधिकारी के लिए प्रतिकूल

नहीं है, लेकिन फिर भी कर्मचारी के विचार और पदोन्नति की संभावनाओं में कुछ बाधा पैदा करने की संभावना है। यदि कर्मचारी इस बात से अनजान है और परिश्रम के उचित अभ्यास के बाद भी इस तरह के प्रतिबंधों / शर्तों या अधिरोपण के बारे में पता नहीं चल सकता है, तो उस स्थिति में यह वर्तमान समय में सेवा के उस वर्ग के लिए अनुचित होगा, जहां पदोन्नति में स्वयं इतनी प्रतिस्पर्धी है और कर्मचारी से काफी कड़ी मेहनत और तुलनात्मक योग्यता की आवश्यकता होती है। यह उचित और सही होगा कि ऐसे मामले, विशेष रूप से एक कर्मचारी की दिशा-निर्देश और नीतियां, संबंधित कर्मचारी को प्रकाशन या कम से कम विभाग को प्रसारित करने के संदर्भ में अवगत कराई जानी चाहिए। प्रशासनिक प्राधिकरण और / या नियोक्ता को अपने कर्मचारी के प्रति एक संवेदनशील और निष्पक्ष रवैया अपनाना होगा ताकि उचित नियोक्ता और कर्मचारी संबंध की शर्तों को पूरा किया जा सके। माननीय उच्चतम न्यायालय ने **हरला बनाम राजस्थान राज्य**[3] के मामले में, हालांकि उनके लॉर्डशिप अफीम अधिनियम के प्रावधानों से संबंधित थे, यह माना कि किसी विशेष कानून या रीति-रिवाजों के अभाव में, किसी राज्य के विषय को उन कानूनों द्वारा दंडित या दंडित करने की अनुमति देना प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के खिलाफ होगा, जिनके बारे में उन्हें कोई जानकारी नहीं थी और जिसके बारे में वे अभ्यास भी नहीं कर सकते थे। उचित परिश्रम के साथ किसी भी ज्ञान को प्राप्त किया है। किसी उचित प्रकार की घोषणा या प्रकाशन आवश्यक है।

17. सेवाओं के नियमों और शर्तों के प्रकाशन या उन्हे लेकर जागरूकता, एक दोहरे उद्देश्य को पूरा करेगी। पहला, कि प्रत्येक कर्मचारी को पता होगा कि उसे पदोन्नति प्राप्त करने के लिए कैसा प्रदर्शन करना चाहिए और दूसरा यह कि उसे अपनी चूक के लिए नोटिस पर रखा जाएगा और उसके पास अपने प्रदर्शन में सुधार करने का उचित मौका होगा। यह एक निष्पक्ष प्रतिस्पर्धा को प्रोत्साहित करेगा और साथ ही उचित और उचित विचार के अवयवों को संतुष्ट करेगा। किसी भी मामले में, हमें कोई नुकसान नहीं दिखता है यदि मामलों विशेष रूप से नियमों के अनुरूप लिए गए नीतिगत निर्णय जब वे सेवा के पूरे वर्ग को प्रभावित करते हैं, तो संबंधित को सूचित किया जाताहै। मामले में, याचिकाकर्ता ने एक विशिष्ट टिप्पणी की है कि 1996 और 1998 के उच्च न्यायालय के फैसले न तो अधिसूचित किए गए थे और न ही प्रसारित किए गए थे और इस तरह के गैर-प्रसार ने याचिकाकर्ता के अधिकार पर प्रतिकूल प्रभाव डाला था। याचिकाकर्ता के अनुसार, अगर वह इस तरह के निर्देशों या मानदंडों के अस्तित्व के बारे में जानता था, तो वह अपने कामकाज में बेहतर प्रदर्शन सहित नियमों के अनुसार उपलब्ध उचित उपायों का सहारा

[3] AIR (38) 1951 S.C. 487

लेता। याचिकाकर्ता की बाद की और यहां तक कि पिछली रिपोर्ट पर जोर दिया गया जिसमें उसे विभिन्न माननीय प्रशासनिक न्यायाधीशों द्वारा 'अच्छा' ग्रेड दिया गया है।

18. याचिकाकर्ता ने **उत्तर प्रदेश राज्य बनाम नरेंद्र नाथ सिन्हा**[4] के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले पर भी भरोसा किया, जहां रिपोर्टिंग अधिकारी द्वारा "उत्कृष्ट" के रूप में दर्ज की गई गोपनीय टिप्पणी को समीक्षा अधिकारी द्वारा वर्गीकृत किया गया था और स्वीकार करने वाले अधिकारी द्वारा स्वीकार किया गया था। याचिकाकर्ताओं ने कहा कि एसीआर की ग्रेडिंग करते समय याचिकाकर्ता को सुनवाई का अवसर दिया जाना चाहिए था क्योंकि काफी समय बीत जाने के बाद प्रविष्टियों में बदलाव किया गया था। माननीय उच्चतम न्यायालय ने उस मामले में राज्य सरकार के संबंधित विभाग के प्रधान सचिव को इस मामले पर नए सिरे से पुन: विचार करने का निर्देश दिया। अंतर्निहित सिद्धांत प्रशासनिक कार्रवाई में निष्पक्षता और उन कर्मचारियों को उचित अवसर प्रदान करना प्रतीत होता है जिनके हितों को प्रतिकूल रूप से प्रभावित होने की संभावना है।

19. इस मामले का एक अन्य पहलू यह है कि वर्तमान मामले में उत्पन्न विवाद ईश्वर चंद्र जैन (सुप्रा) के मामले में डिवीजन बेंच के फैसले से सुलझा या गया था। डिवीजन बेंच ने 1996 के न्यायालय के फैसले की वैधता या प्रमाण-पत्र पर विचार किए बिना, कहा कि पूर्ण न्यायालय द्वारा किसी भी सामग्री के अभाव में टिप्पणी को डाउनग्रेड नहीं किया जा सकता है। यह निर्णय न केवल अपने आप में एक पूर्ण मार्गदर्शिका-रेखा होगी, बल्कि उच्च न्यायालय के लिए बाध्यकारी होगी, क्योंकि यह अंतिम रूप प्राप्त कर चुका है। एक बार जब उच्च न्यायालय ने निर्णय को स्वीकार कर लिया है, तो यह स्पष्ट रूप से समान रूप से स्थित अधिकारियों पर इसे लागू करने का दायित्व अर्जित करता है, विशेष रूप से जहां प्रभावित अधिकारी इसके संदर्भ में राहत देने के लिए उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाता है।

20. जैसा कि पहले ही देखा जा चुका है, वर्ष 1997-98 के लिए याचिकाकर्ता की गोपनीय रिपोर्ट को 3 दिसंबर, 1998 को पूर्ण न्यायालय द्वारा डाउनग्रेड किया गया था। याचिकाकर्ता ने 8 फरवरी, 1999 को अपना पहला अभ्यावेदन दिया था, जिसे अस्वीकार कर दिया गया था। बाद में उन्होंने एक और विस्तृत अभ्यावेदन दायर किया, जब उन्हें माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले पर भरोसा करते हुए पदोन्नति के लिए नजरअंदाज कर दिया गया। हालांकि, उनके दूसरे अभ्यावेदन को उच्च न्यायालय ने एक संक्षिप्त आदेश से खारिज कर दिया था। जाहिर है और जैसा कि रिकॉर्ड से पता चलता है, ईश्वर चंद्र जैन के मामले (सुप्रा) में फैसला सुनाए जाने के बाद उच्च

[4] (2001) 9 S.C.C. 118

न्यायालय द्वारा दो अलग-अलग अवसरों पर याचिकाकर्ता के प्रतिनिधित्व पर विचार किया गया था।

21. हम यहां यह भी देख सकते हैं कि याचिकाकर्ता के प्रतिनिधित्व के संबंध में मामला पूर्ण न्यायालय और यहां तक कि प्रशासनिक समिति के समक्ष विचार के लिए रखा गया था, ईश्वर चंद्र जैन के मामले (सुप्रा) में डिवीजन बेंच के फैसले को शायद पूर्ण न्यायालय के संज्ञान में नहीं लाया गया था, जो संभवतः याचिकाकर्ता के प्रतिनिधित्व को अस्वीकार करने का कारण था।

22. **सतबीर सिंह बनाम हरियाणा राज्य**[5] के मामले में इस न्यायालय की खंडपीठ ने राज्य को निष्पक्ष तरीके से, विशेष रूप से सेवा मामले के संबंध में अपनी प्रशासनिक शक्ति का प्रयोग करने का निर्देश देते हुए निम्नानुसार कहा:

> ''हमारा मानना है कि राज्य को याचिकाकर्ताओं द्वारा दिए गए नोटिस का जवाब देना चाहिए था या कम से कम उपस्थित होना चाहिए था, जिसमें उनके पक्ष में अदालत के फैसलों का विशेष रूप से उल्लेख किया गया था। हरियाणा के एडवोकेट जनरल ने निष्पक्ष रूप से स्वीकार किया कि समय आ गया है जब राज्य को अनावश्यक मुकदमेबाजी से बचने के लिए निवारक उपाय करने चाहिए। जहां कहीं न्यायालयों ने कानून का निपटारा किया है। राज्य ने निर्णय के विरुद्ध देश की सर्वोच्च अदालत में अपील करने के लिए कानून में सभी उपलब्ध उपाय किए हैं, उस स्थिति में राज्य को निर्णय को स्वीकार करना चाहिए और इसे अपनी वास्तविक भावना और आदेश में लागू करना चाहिए।"
>
> (I)'जहां कहीं भी न्यायालय के निर्णय द्वारा पक्षकारों के अधिकारों का निपटान किया गया है, राज्य ने उस निर्णय के विरुद्ध कानून में उपलब्ध सभी उपाय किए हैं, यहां तक कि देश की सर्वोच्च अदालत तक भी और निर्णय को अंतिम रूप दे दिया है, तो राज्य को निर्णय को स्वीकार करना चाहिए और इसे अपनी वास्तविक भावना और आदेश में लागू करना चाहिए। कैडर के अन्य सदस्यों को भी इसी तरह की राहत देने के लिए राज्य की ओर से अंतर्निहित दायित्व है, जिनका दावा समान तथ्यों और कानून के बिंदुओं पर आधारित था। इसी तरह का विचार इस न्यायालय की एक अन्य खंडपीठ ने **सत्यपाल**

[5] 2002 (2) S.C.T.- 354

सिंह और अन्य बनाम हरियाणा राज्य और अन्य[6] के मामले में भी व्यक्त किया था। (6)

23. कानून व्यर्थ कुछ भी आदेश नहीं देता है। एक बार जब पक्षकारों की दलीलों पर विचार कर लिया जाता है और निर्णय की घोषणा के माध्यम से निपटाया जाता है, जिसे अंतिम रूप दिया जाता है, तो इसका प्रवर्तन सभी संबंधितों का पवित्र दायित्व होगा। न्यायालय मुख्य रूप से कानूनी संरक्षण के उद्देश्य से या राज्य के विधायी और कार्यकारी को अपनी शक्ति के भीतर और जनता के हित में सीमित करके कार्यों का निर्वहन करता है। निर्णय कानून को कहते हैं क्योंकि यह मौजूद है और मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर लागू होता है। अधिकारियों के बीच असंतोष और हताशा से बचने के लिए, जो स्वयं न्यायिक कार्यों का निर्वहन कर रहे हैं, उन्हें इस तरह के दायित्व से अवगत कराया जाना चाहिए। प्रशासनिक शक्तियों का प्रयोग अंतर्निहित सावधानी और प्रतिबंधों के साथ किया जाना चाहिए ताकि यह कानून का उल्लंघन न करे। "**Lex est sanctio sancta, jubens honesta et prohibens contraria"**

24. उच्च न्यायालय की ओर से पेश विद्वान वकील ने तर्क दिया कि चूंकि ऊपर दिए गए मापदंडों को उच्च न्यायालय द्वारा 3 दिसंबर, 1998 और 5 जनवरी, 1999 के पूर्ण न्यायालय के संकल्प द्वारा रद्द कर दिया गया था, इसलिए, इसे संभावित कहा जाता है। अपनी दलील के समर्थन में उन्होंने **गंगा राम मूलचंदानी बनाम राजस्थान राज्य और अन्य**[7], व **भारत संघ और अन्य बनाम मों. रमज़ान खान**[8] के मामलों में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णयों पर भरोसा किया। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि पूर्वेक्षण का सिद्धांत नए कानून को भविष्य में लागू करने पर प्रतिबंध लगाता है ताकि निपटाए गए मामलों को फिर से उठाया जा सके और उन पर कोई प्रभाव न पड़े। इस उद्देश्य के लिए, उन्होंने **कैलाश चंद शर्मा आदि बनाम राजस्थान राज्य और अन्य**[9] व **हर्ष ढींगरा बनाम हरियाणा राज्य और अन्य**[10] , आदि मामलों में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों पर भी भरोसा किया। इनमें से कोई भी तर्क उत्तरदाताओं के लिए कोई मदद नहीं है। जैसा कि पहले ही देखा जा चुका है, 1996 के लागू मानदंड को उत्तरदाताओं द्वारा पहले ही वापस ले लिया गया है। वास्तव में, यह वर्तमान रिट याचिका दायर करने से पहले भी किया गया था, इस प्रकार, उक्त मानदंड को रद्द करने का प्रश्न ही नहीं उठता है। याचिकाकर्ता

---

[6] 1999 (2) R.S.J. 377
[7] J.T. 2001 (5) S.C. 570
[8] AIR 1991 S.C. 471
[9] J.T. 2002 (5) S.C. 59
[10] J.T. 2001 (8) S.C. 296

की ओर से यह जोरदार तर्क दिया गया है कि ईश्वर चंद्र जैन के मामले (सुप्रा) में लेटर्स पेटेंट बेंच के फैसले को प्रतिवादियों द्वारा एक बाध्यकारी मिसाल के रूप में माना जाएगा और याचिकाकर्ता उसी राहत का हकदार होगा, जैसा कि उस मामले में दिया गया था। हमारी राय में इस तर्क में कुछ दम है। किसी मामले पर पहले दिए गए न्यायिक फैसलों का सम्मान किया जाना चाहिए और एक मिसाल के रूप में इसका पालन किया जाना चाहिए, जब तक कि यह नियम के अपवाद में न हो। किसी भी अधिकार का निपटारा नहीं किया गया है जिसे याचिकाकर्ता के हित के प्रतिकूल लिया जा सकता है क्योंकि वह उचित अधिकारियों को अपनी शिकायत के निवारण की मांग के लिए लगातार अभ्यावेदन दे रहा है। अपने अभ्यावेदन को अस्वीकार करने के बावजूद, याचिकाकर्ता कानून के अनुसार न्याय पाने का हकदार होगा। इसके अलावा, हम पहले ही कह चुके हैं कि वर्तमान याचिका विलंब और विलंब के दोष से ग्रस्त नहीं है।

25. वर्तमान मामले के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए संभावना के सिद्धांत की प्रयोज्यता के संबंध में प्रश्न मुख्य रूप से अकादमिक होगा। हमें इस मुद्दे पर आगे विस्तार से बहस करने का कोई कारण नहीं दिखता है।

26. दर्ज किए गए कारणों के लिए, हम इस रिट याचिका को अनुमति देते हैं, क्रमशः 19 फरवरी, 1999, 7 जून, 1999 और 22 फरवरी, 2003 के आदेशों को रद्द करते हैं और उच्च न्यायालय की रजिस्ट्री को वर्ष 1997-1998 के लिए याचिकाकर्ता की गोपनीय रिपोर्ट को बी + (अच्छा) के रूप में दर्ज करने का निर्देश देते हैं। जब तक कि उच्च न्यायालय के समक्ष कोई अन्य दृष्टिकोण लेने के लिए कुछ सामग्री प्रस्तुत नहीं की जाती है, जैसा कि कानून में स्वीकार्य हो सकता है।

27. उपरोक्त शर्तों में रिट की अनुमति दी जाती है, जिससे पार्टियों को अपनी लागत वहन करने के लिए छोड़ दिया जाता है।

R.N.R

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

हिमांशु जांगड़ा

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी